e-ISSN:2582 - 7219

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH IN SCIENCE, ENGINEERING AND TECHNOLOGY

Volume 4, Issue 12, December 2021

INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER INDIA

Impact Factor: 5.928

| ISSN: 2582-7219 | www.ijmrset.com | Impact Factor: 5.928|

| Volume 4, Issue 12, December 2021 |

|DOI:10.15680/IJMRSET.2021.0412009 |

गिरीश पंकज के व्यंग्य उपन्यास: एक विश्लेषण

***जे.जाक्कुलिन तंगम & **डॉ. वी जगन्नाथ रेड्डी**

* शोधार्थी , हिंदी विभाग, अण्णामलै विश्वविद्यालय, तमिल नाडु, इंडिया

** शोध निदेशक , हिंदी विभाग, अण्णामलै विश्वविद्यालय, तमिल नाडु, इंडिया

सार

हम तो दरिया हैं हमें अपना हुनर मालूम है दरिया और मानव की अदम्य प्रकृत्ति के संबंध में इन शब्द पंक्तियों को हम गाहे-बगाहे सुनते रहे हैं और देखते रहे हैं कि, आगे बढ़ने की विशाल लक्ष्य को भी दरिया जैसे सहज-सरल रूप में बहते हुए प्राप्त कर लेना कुछ विशेष लोगों की प्रकृति होती है। आगे बढ़ने के साथ-साथ खुद-ब-खुद पथरीले कठिन बाधाओं को रास्ता बनना पड़ता है जिसमें से होकर आगे की पीढ़ी कठिन लक्ष्य को भी सहज पार कर लेती है। यशश्वी पत्रकार और चर्चित साहित्यकार, ब्लॉगर गिरीश पंकज जी कुछ ऐसे ही व्यक्तित्व हैं। गणतंत्र दिवस की पूर्व संध्या पर एक गरिमामय कार्यक्रम में अभियान भारतीय तथा चेतना साहित्य एवं कला परिषद, छत्तीसगढ़ द्वारा हमारे इन्हीं दोनों अग्रजों को चेतना साहित्य सम्मान-11 प्रदान किया गया। प्रथम चेतना साहित्य सम्मान 11 व प्रथम चेतना ब्लॉगर सम्मान 11 से नवाजे गए हमारे दोनों ब्अग्रजों से आप परिचित हैं फिर भी इनके संबंध में दो शब्द मैं लिखना चाहूंगा-

गिरीश पंकज जी विगत पैतीस सालों से साहित्य एवं पत्रकारिता में समान रूप से सक्रिय हैं। वर्तमान में साहित्य अकादेमी, दिल्ली के सदस्य एवं छत्तीसगढ़ राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के प्रांतीय अध्यक्ष हैं। गिरीश जी की बत्तीस पुस्तकें अब तक प्रकाशित हैं जिसमें तीन व्यंग्य-उपन्यास : मिठलबरा की आत्मकथा, माफिया, और पालीवुड की अप्सरा, आठ व्यंग्य संग्रह : ईमानदारों की तलाश, भ्रष्टाचार विकास प्राधिकरण, ट्यूशन शरणम गच्छामि, मेरी इक्यावन व्यंग्य रचनाएँ, मूर्ति की एडवांस बुकिंग, हिट होने के फार्मूले, नेता जी बाथरूम में, एवं "मंत्री को जुकाम", नवसाक्षरों के लिये चौदह पुस्तकें बच्चो के लिये चार किताबें, एक हास्य चालीसा, दो ग़ज़ल संग्रह हैं। कर्नाटक एवं मध्यप्रदेश में दो शोधार्थी गिरीश पंकज के व्यंग्य-साहित्य पर पीएच.डी. कर रहे है. गिरीश भाई अमरीका, ब्रिटेन, त्रिनिदाद, मारीशस आदि लगभग दस देशो का प्रवास कर चुके हैं एवं निरंतर साहित्य साधना में रत हैं। नवोदित रचनाकारों को प्रोत्साहित कर उनके रचनाकर्म में प्राण फूंकने वाले मृदुभाषी गिरीश भईया सबके प्रिय हैं।

परिचय

हर ब्लॉगर की अपनी एक अलग पहचान है , कोई साहित्यकार है तो कोई पत्रकार , कोई समाजसेवी है तो कोई संस्कृतिकर्मी , कोई कार्टूनिस्ट है तो कोई कलाकार । हर ब्लॉगर के सोचने का अपना एक अलग अंदाज़ है , एक अलग ढंग है प्रस्तुत करने का । अलग-अलग नियम है , अलग-अलग चलन किन्तु फिर भी एक सद्भाव है जो आपस में सभी को जोड़ता है । नि:संदेह इसकी जड़ों में सहिष्णुता की भारतीय मर्यादा है, जो हमें सद्भावना की शिक्षा देती है ।इन्हीं उद्देश्यों के दृष्टिगत परिकल्पना समूह के संचालक-समन्वयक और हिंदी के मुख्य ब्लॉग विश्लेषक लखनऊ निवासी रवीन्द्र प्रभात ने अपने छ: सहयोगियों क्रमश: अविनाश वाचस्पति, रश्मि प्रभा, जाकिर अली रजनीश, रणधीर सिंह सुमन,विनय प्रजापति और ललित शर्मा के साथ मिलकर अंतरजाल पर विगत वर्ष - २०१० को ब्लॉगोंत्सव मनाने का फैसला किया और इस उत्सव को नाम दिया "परिकल्पना ब्लॉग उत्सव-2010। वर्ष के श्रेष्ठ ब्लॉग विचारक - श्री गिरीश पंकज, रायपुर, को माना गया ।[1]

| ISSN: 2582-7219 | www.ijmrset.com | Impact Factor: 5.928|

| Volume 4, Issue 12, December 2021 |

|DOI:10.15680/IJMRSET.2021.0412009 |

गिरीश पंकज -जन्म : १ जनवरी, १९५७

शिक्षा : एम.ए. (हिंदी), बी. जे.(प्रावीण्य सूची में प्रथम), डिप्लोमा इन फोक आर्ट।

तीन व्यंग्य उपन्यासः मिठलबरा की आत्मकथा, माफिया (दोनों पुरस्कृत), एवं पॉलीवुड की अप्सरा। नवसाक्षरों के लिए बारह पुस्तकें, बच्चों के लिए चार पुस्तकें। एक ग़ज़ल संग्रह, एक हास्य चालीसा। चार व्यंग्य संग्रहों में रचनाएँ संकलित।

'ट्यूशन शरणं गच्छामि' , 'भ्रष्टाचार विकास प्राधिकरण' , 'मंत्री को जुकाम' , 'ईमानदारों की तलाश' , 'हिट होने के फॉर्मूले' , 'नेताजी बाथरूम में' , 'मूर्ति की एडवांस बुकिंग' , 'मेरी इक्यावन व्यंग्य रचनाएँ' , 'सम्मान फिक्सिंग' एवं 'निलंबित की आत्मकथा' , 'माफिया' , 'पॉलीवुड की अप्सरा' एवं 'एक गाय की आत्मकथा' (उपन्यास); पंद्रह पुस्तकें नवसाक्षरों के लिए, बच्चों के लिए चार पुस्तकें, दो गजल संग्रह, एक हास्य चालीसा।[2]

सम्मान-पुरस्कार : हिंदी सेवाश्री सम्मान, त्रिनिडाड, रमणिका फाउंडेशन सम्मान, आर्यस्मृति साहित्य सम्मान, अट्टहास सम्मान, लीलारानी स्मृति सम्मान, रामेश्वर गुरु पत्रकारिता सम्मान, करवट सम्मान, सर्वश्रेष्ठ ब्लॉगर सम्मान, श्रीलाल शुक्ल व्यंग्य सम्मान इत्यादि।

अन्य : कन्नड़, तेलुगु, तमिल, मलयाली, भोजपुरी, ओडिया, उर्दू, सिंधी, पंजाबी, मराठी, छत्तीसगढ़ी आदि में रचनाएँ अनूदित। दस देशों की यात्राएँ। 'गिरीश पंकज के कृतित्व-व्यक्तित्व' पर कर्नाटक, महाराष्ट्र, छत्तीसगढ़ एवं मध्य प्रदेश में पी-एच.डी. उपाधि के लिए शोधकार्य।

संप्रति : संपादक-प्रकाशक, 'सद्भावना दर्पण' , सदस्य-साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली, सदस्य-छत्तीसगढ़ ग्रंथ अकादमी, अध्यक्ष– छत्तीसगढ़ राष्ट्रभाषा प्रचार समिति।[3]

| ISSN: 2582-7219 | www.ijmrset.com | Impact Factor: 5.928|

| Volume 4, Issue 12, December 2021 |

|DOI:10.15680/IJMRSET.2021.0412009 |

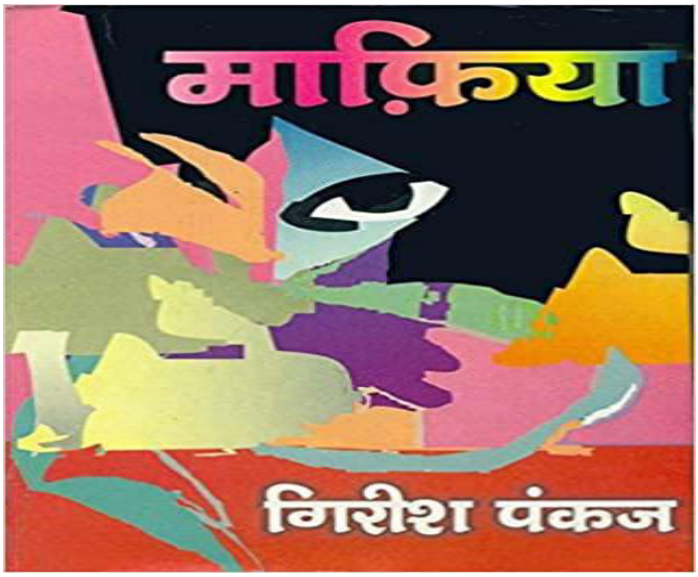

Maafiya पेपरबैक – 1 जनवरी 2003, हिंदी संस्करण, जानते सब हैं, पर लिखते बहुत कम है कि राजनीति के समान साहित्य में भी दल ही दल हैं, तिकड़मबाजियाँ और सौदेबाजियाँ हैं, अवसरवाद और खिलाऊ-पिलाऊवाद है, अफसरों और नेताओं के 'साहित्यिक' हथकंडे हैं और संपादकों तथा सम्मानों के बिकाऊ झंडे हैं । गिरीश पंकज ने इस उपन्यास में संगोष्ठियों आदि के माध्यम से बिना 'लोक-लाज' के भय के इन सबके कपडे उतार दिए हैं । अब यह पाठकों पर निर्भर करता है कि वे इस 'नंगेपन' पर 'कैसी नजर डालते हैं! उपन्यास का प्रमुख कथ्य बहुरूपी साहित्य-माफिया है, जिसके बीच-बीच से शोध-माफिया, विज्ञापन-पुराण, छंद-हत्या, ठेका-लेखन आदि पर भी लटके-झटके सफाई किए गए है ।[4]

अवलोकन

गिरीश पंकज के चर्चित उपन्यास “एक गाय की आत्मकथा” का लोकार्पण

भारतेन्दु हरिश्चंद्र संस्थान और बाबा हिरदाराम पुस्तक सेवा समिति,जयपुर के संयुक्त तत्वावधान में रविवार,27 मार्च 2016 को सुप्रसिद्ध व्यंग्यकार गिरीश पंकज के सद्य प्रकाशित उपन्यास “एक गाय की आत्मकथा” का संत श्रीसिद्ध भाऊ ने लोकार्पण किया। उन्होंने कहा कि आज राष्ट्र प्रेम को लेकर भी जब एक चुनौती है तब ऐसे समय में गौधन के प्रति चिंता करना एक बड़ा सवाल है।गाय हो या गंगा इसके प्रति उच्च मनोभावना से ही इसकी रक्षा संभव है। वर्तमान हालात तो त्रासदी भरे हैं। होटल वाची इन के सभागृह में आयोजित इस समारोह में प्रतिष्ठित साहित्यकार भगवान अटलानी, मथुरेश नन्दन कुलश्रेष्ठ और डॉ लाल मोरानी ने गिरीश पंकज के इस उपन्यास को गौसेवा के प्रति नई चेतना जगाने की दिशा में एक सार्थक उपलब्धि बताया।

मुख्य वक्ता व्यंग्यकार एवं आह्वान के अध्यक्ष फारूक आफरीदी ने कहा कि एक लंबे समय बाद प्रेमचंद के गोदान उपन्यास में किसान और गौधन के प्रति व्यक्त चिंता को व्यंग्यात्मक ढंग से विस्तार देने का सफल प्रयास किया गया है। उपन्यास में गौधन के प्रति जूठी वाहवाही लूटने वालों और राजनीति करने वालों का पर्दाफाश किया गया है। गाय के नाम पर पाखंड करने वालों को आड़े लिया गया है वहीं गौसेवा के लिए सामाजिक समरसता का सकारात्मक संदेश देने का प्रयास किया गया है।[5]

समारोह में उपन्यासकार गिरीश पंकज का शॉल ओढ़ाकर एवं स्मृति चिन्ह प्रदान कर सम्मान किया गया। प्रारम्भ में समिति के सचिव गजेंद्र रिझवानी ने सदसाहित्य के प्रकाशन की योजना पर प्रकाश डाला। पथमेड़ा गौधाम से जुड़े गजेंद्र सिंह और आह्वान से जुड़े गणेशजी महाराज साईंधाम ने इस पुस्तक को गौसेवा के प्रति चेतना का संचार करने वाला साहित्य बताते हुए इसके प्रसार में हर संभव योगदान का विश्वास दिलाया। समिति के अध्यक्ष हरगुण नेभनानी ने आभार जताया। कार्यक्रम का संचालन चित्रेश रिझवानी ने किया। समारोह में जयपुर के अनेक वरिष्ठ साहित्यकार और प्रबुद्धजन मौजूद थे।

अनामी शरण बबल युवा भी हैं और वरिष्ठ पत्रकार भी। अनेक महत्वपूर्ण अखबारों में वे काम कर चुके हैं। अपनी महत्वपूर्ण पत्रिका का प्रकाशन भी कर रहे हैं। फेसबुक के माध्यम से वे मुझसे और अधिक गहरे तक जुड़ गए हैं। उनके मन में मेरी रचनात्मकता के प्रति काफी आदरभाव है। अपनी पत्रिका का एक अंक मुझे पर केंद्रत भी करने की योजना उनकी रही है। उनका मानना है कि

| ISSN: 2582-7219 | www.ijmrset.com | Impact Factor: 5.928|

| Volume 4, Issue 12, December 2021 |

|DOI:10.15680/IJMRSET.2021.0412009 |

साहित्य में इतनी सक्रियता के बाद भी मुझे वह स्थान शायद नहीं मिल सका, जो मिलना चाहिए थे। उनका कहना है कि महानगर के लेखकों ने कस्बों के लेखकों के साथ अन्याय किया है। खैर, मैंने कितना लिखा, कैसा लिखा, इसके बारे में खुद कुछ कहना ठीक नहीं पर जब श्री बबल जैसे मित्र मेरे साथ खड़े होते हैं तो संतोष होता है कि सभी अन्यायी नहीं है। पिछले दिनों श्री बबल ने फेसबुक के इनबॉक्स में आकर संदेश भेजा कि आपसे अपनी पत्रिका के लिए संक्षिप्त साक्षात्कार लेना चाहता हूँ। मैंने कहा-बिल्कुल, स्वागत है। तो फिर अनायास सिलसिला शुरू हुआ। मुझे लगा कि कुछेक सवाल होंगे और बात खत्म हो जाएगी, पर ऐसा नहीं हुआ। संक्षिप्त-सा समझा जाने वाला साक्षात्कार की हनुमान जी की पूँछ की तरह बड़ा होता गया और लगभग अभूतपूर्व स्थिति में पहुँच गया। इसकी कल्पना मैंने भी नहीं की थी और न बबल ने। श्री बबल ने प्रश्नों की बारिश ही कर दी । एक-दो तीन-चार नहीं, पूरे एक सौ बीस सवाल तक वे पहुँच गए। और यह महासाक्षात्कार बन गया। मुझे लगता है हिंदी जगत में किसी लेखक से इतना बड़ा साक्षात्कार इससे पहले कभी नहीं लिया गया । मेरे लिए यह रोमांचक अनुभव था। इतने सारे प्रश्नों को देखना और उनके जवाब देना भी बेहद कठिन चुनौती थी। पर यह चुनौती मैंने स्वीकार की। वे प्रश्न पूछते गए, मैं उत्तर देता गया। अपने विवेकानुसार हर प्रश्न का उत्तर दिया। मेरे जीवन के प्रारंभिक काल से लेकर साहित्य जीवन के विभिन्न पहलुओं पर श्री बबल के अद्भुत प्रश्न उभर कर सामने आए। देखना यही है कि सुधी पाठक उत्तरों को कितना पसंद करते हैं।[6]

बचपन की अनेक यादें अब स्मृति-कोश रूपी हार्डडिस्क में अब संचित नहीं हैं। कुछ ही बची हुई हैं, पर वे भी अब कुछ धुंधली-सी हो गई हैं। कुछ जो बची हैं, उन्हें याद करके हम नॉस्टेल्जिक हो जाते हैं यानी अतीत की मधुर स्मतियों में खो जाते हैं। और फिर तरोताजा होने की कोशिश भी करते हैं, उन पलों में जी कर। जब मैं यादों के धुंधलके में देखने की कोशिश करता हूँ तो एक नन्हा बालक नजऱ आता है, जो पढ़ाई से दूर भागता था। कभी नदी किनारे चला जाता, कभी घुड़सवारी करता। कभी बस्ता भूल कर घर लौटता था, तो कभी यही याद नहीं रहता कि घर भी लौटना है। जो पतंग उड़ा रहा है.. गिल्ली-डंडा खेल रहा है। आमा डंडी में मस्त है। वह कंचे खेल रहा है। छप्पा (सिगरेट के खोकों को जमा करके उससे खेलना)खेल रहा है। गुच्चू (एक खेल जिसमें एक छोटे-से छेद में सिक्के डालना होता है) खेल रहा है। जिसकी जिंदगी में मस्ती थी, शैतानियाँ थी। पिताजी की पिटाई है। उनका स्नेहभरा हाथ भी है। माँ का प्यार है। मित्रों से तकरार है। उस वक्त कुछ बनने के सपने तो थे ही नहीं। "अरे मेरे बाप, मैं तो उस बिल्डिंग की बात कर रहा हूँ।" तब लोगों ने सॉरी बोल कर उसे छोड़ दिया। उस दिन सड़क के किनारे पड़े एक पत्थर को वह दस हजार साल पुराना बताने लगा।

बचपन को मैं दूसरे बच्चों की मानिंद ही देखता हूँ, जिसमें स्वच्छंदता है। उत्साह है। उमंग है। तरंग है। जीवन के अनेक रंग हैं। आज के बच्चों के पास बचपन का वो सुख नहीं हैं जो हमने भोगा। तब बस्ते का बोझ ही नहीं होता था। अपने बचपन की आज़ादी और आनंद के उन दिनों को याद करता हूँ, तो कई बार अफ़सोस होता है कि हम बड़े क्यों और कैसे हो गए। काश, अभी भी बच्चे होते, तो शायद कुछ अच्छे होते। खुशकिस्मत हूँ कि मेरा बचपन बेहद खूबसूरत रहा। जहाँ मस्ती थी, आनंद था। इसलिए आज भी तरोताजा होना होता है तो बचपन को याद करता हूँ। यादों की जुगाली बड़ा सुकून देती है। मन को निर्मल करने के लिए बच्चा बनना पड़ता है। आज अगर कोई पूछे कि आपकी क्या इच्छा है तो मैं कहूँगा मुझे फिर से बच्चा बना दो । [7]

विचार – विमर्श

गिरीश पंकज के अनुसार:-

बचपन को भूल पाना कठिन है। उसकी याद आती रहती है। बचपन के मित्रों की भी याद आती है। कुछ तो आज भी मिलते हैं और बातें करते हैं। कुछ बातें जो मैं भी भूल चुका हूँ, वे याद दिलाते हैं। बालकपन भी खूब याद आता है, और बचपन भी। बालकपन यही कि पढ़ाई से भागने की कोशिशें की। गंगा, नर्मदा और हसदो नदी में कूद-कूद कर नहाने की यादें हैं। दिन में ही होलिका दहन कर दिया था, वो यह याद है। बचपन यानी वह पड़ाव जिसमें हम चहकते हैं चिडिय़ों की तरह। पिता के तमाम संघर्षों से अनजान, माँ की परेशानियों से दूर, अपने में मस्त बचपन। मारपीट, दादागीरी, मस्ती। इन सबमें घुले-मिले बचपन को बार-बार याद करता हूँ। बालकपन की याद कम है, बचपन की यादें हैं, पर इक्का-दुक्का ही।

अब यादा आता है कि वह समय शायद निजी अभावों का समय था, पर भरपूर आनंद का भी मिला हमें। क्योंकि हमें वैसे महान पिता मिले। जो अपनी जेब काट कर बचत करते थे हमारे लिए। वे घर के भीतर टीने की पेटी गाड़ देते थे। जिसमें आते-जाते वे कुछ-न-कुछ रुपये या सिक्के डाल दिया करते थे। दिवाली के समय उसे निकालते थे। तब हम रोमांचित हो जाते थे, जब देखते थे, डिब्बा भर गया है रुपयों और सिक्कों से। तब समझ में आता था बचत का महत्व। पिताजी सप्ताह में एक बार पच्चीस पैसे दे देते थे। सात दिन काटने होते थे। फिर भी कोई गिला नहीं, कोई , शिकायत नहीं। इन्हीं पैसो के सहारे ऐश कर लेते थे। चॉकलेट, टोस्ट, गुपचुप आदि खरीद कर आनन्दित होते रहते थे। आज हम इसकी कल्पना भी नहीं कर सकते। हम तंगहाली में भी खुशहाली के साथ जी लेते थे, पर आज के बच्चे पिता की गर्दन पकड़ कर खर्च करवा लेते हैं। मुझे याद है, पिताजी जो पैसे देते थे, उसमें से भी

| ISSN: 2582-7219 | www.ijmrset.com | Impact Factor: 5.928|

| Volume 4, Issue 12, December 2021 |

|DOI:10.15680/IJMRSET.2021.0412009 |

कुछ बचा लेता था, ताकि कुछ ज्यादा पैसे मेरे पास जमा रह सके, क्योंकि तम मुझे धर्मेंद्र, देवानंद या राजेंद्रकुमार की फ़िल्में भी देखनी होती थीं। सिनेमा देखने के लिए पिताजी पैसे नहीं देते थे। वे पैसे अपनी बचत से मैं निकाल लेता था। फिल्म देखने का शौक था। कभी-कभी चोरी-छिपे देखने भी जाता था। तीस पैसे में थर्ड क्लास में बैठ कर फिल्म देख लेते थे। दो-चार पैसे में मूँगफल्ली भी मिल जाती थी। जब कभी पास में पैसे नहीं होते थे, तब उस टाकीज के टूटे-से दरवाजे से झाँक कर भी कुछ-कुछ आनंद उठाने की भी कोशिश करते थे। पिताजी गांधीवादी थे। फिल्मों के शौक़ीन तो थे, पर बहुत अधिक नहीं इसलिए मुझ पर ध्यान रखते थे कि ज्यादा सिनेमा न देखूँ। इसके पीछे भाव यही था कि मैं मन लगा कर पढ़ूँ और अपना भविष्य गढ़ूँ। कभी कोई धार्मिक या देशभक्ति वाली फिल्म आ जाए तो खुद कहते थे, जाकर देख लेना। [8]

आज के समय से उस दौर की तुलना हो ही नहीं सकती। पिछले चालीस वर्षो में हमारा समाज बदल गया है। अब हम लोग शॉपिंगमॉल - संस्कृति में जी रहे हैं। अब तो नये लड़कों को सब कुछ ब्रांडेड चाहिए। उससे नीचे समझौता ही नहीं करते। भले ही माता-पिता को चूना लग जाए। मूर्खता ये भी है कि सौ जगह से फटी पैंट भी ब्रांडेड चाहिए। इतना अधिक पागलपन है। उस वक्त बांडेड जैसे शब्द ही चलन में नहीं थे। छोटा-सा बाज़ार हुआ करता था, जिसमें जरूरत और फैशन के सभी सामान मिल जाया करते थे। यह जो अंतराल आया है, वह पश्चिमोन्मुखी भारत बनाम इंडिया के कारण आया है। विदेश की संस्कृति को हमने आधुनिक होने का पैमाना समझ लिया इस नकल में अक्ल का काम ही नहीं लिया। और एक नकलची बंदर की तरह समाज को इस मुहाने पे लाकर खड़ा कर दिया है कि अब गाँव-गाँव में बरमूडा मिल जाएंगे और जींस और टॉपधारी लड़कियां भी। माता-पिता भी इस बदलाव को अच्छा मानते हैं और अपने समय को हताशा के साथ निहारते हैं कि उनका कल आज की तरह चमक-दमक वाला क्यों न था। संक्षेप में कहूँ, तो कल और आज का जो अंतराल है, वह उपभोक्तावादी संस्कृति से उपजे बाजारू दैत्य का मायाजाल है, जिसमें हम सब रहने के लिए अभिशप्त हैं। और यह अभिशाप हमें किसी प्रतिसाद - सा या प्रसाद -सा आनंददायक लग रहा है।

जब बनारस में गर्मी की छुट्टियां बिताने पिताजी के साथ दूधविनायक मंगलागौरी के घर अपनी शांति बुआ के पास आया करता था तब गंगा नदी के किनारे घाटों पर बने मंदिरों पर चढ़ कर नदी में गोते लगाया करता था। आज भी गंगा को देखता हूँ तो बचपन लौट आता है। ये और बात है कि प्रदूषित गंगा में अब नहाने की हिम्मत नहीं होती। बचपन में मनेंद्रगढ़ में अक्सर कुछ मित्रों के साथ घुड़सवारी करता था। हसदो नदी के किनारे चरते घोड़ों को हम पकड़ लिया करते थे। मंदिर की आरती में नियमित रूप से शरीक होता था। दशहरे के दिन भगवान राम बन कर हाथी पर सवार होकर शहर का चक्कर लगाना और सैकड़ों लोगों को भगवान रूप में आशीर्वाद देना, और अंत में रावण दहन के बाद फिर मंदिर आकर सबको आशीर्वाद देना। यह सब याद करता हूँ तो बचपन में पहुँच जाता हूँ, तब लगता है एक बार फिर वही जीवन री-प्ले हो जाए। मन-ही-मन बचपन के अनेक घटनाक्रमों को याद करके बचपन में लौट कर बेहद खुश होता हूँ। बस, यही सुख मन को बालक बना देता है। [9]

सबसे पहला सवाल कि मेरी काहनियों या उपन्यासों में किस तरह के संदेश हैं। तो मैं स्पष्ट कर दूँ कि मेरी हर रचना संदेह के साथ रची जाती है। सामाजिक परिवर्तन की उत्कट अभिलाषा ही मेरा रचनात्मक लक्ष्य है। कहानियों की तरह मेरे हर उपन्यास का अपना लक्ष्य रहा है। कहानियों पर बात लम्बी हो जाएगी पर उपन्यास सीमित हैं इसलिए उन पर विमर्श हो सकता है। मेरा उपन्यास मिठलबरा की आत्मकथा (सन् 1999)क्षेत्रीय पत्रकारिता पर मेरा पहला व्यंग्य उपन्यास था। जिसके बारे में प्रेस जगत के अनके पुराने लोग जानते हैं। इस उपन्यास का उद्देश्य यही था कि हिंदी जगत को पता चल सके कि और की आजादी के लिये संघर्ष करने वाले पत्रकार किस तरह एक संपादक के गुलाम होते हैं । खास कर उस संपादक के जो मालिकों का दलाल होता है। पत्रकारिता जब इंटरनेट के दौर में आई और उस पर बाजारवाद हावी हुआ तो सन् 2014 में मेरा उपन्यास आया 'मीडियाय नम:ó । इसमें भी व्यंग्य के माध्यम से कुछ चरित्रों की पड़ताल की जो पत्रकारिता में तो हैं मगर उनका चरित्र दागदार है। वे संपादक है या मालिक हैं, पतित हो चुके हैं। बाजार ने उन्हें बाजारू बना दिया है। माफिया (2003) उपन्यास में साहित्य जगत में पनप रहे साहित्यिक माफिया पर प्रहार है। एक तरफ संघर्षशील लेखक हैं, तो दूसरी तरफ अफसर-लेखक हैं, जिनको हमारा हिंदी का आलोचक महान रचनाकार के रूप में स्थापित करने में लगा रहता है। उसकी जय-जयकार करता है। पॉलीवुड़ की अप्सरा (2007) में क्षेत्रीय सिनेमा में घुस रही बुराइयों को व्यंग्यात्मक चित्रण हुआ है। एक गाय की आत्मकथा में भारतीय देसी गायों की दुर्दशा का चित्रण है। कैसे इस उपभोक्तावाद ने स्वार्थी गौ भक्तों को गाय को बेचने के मामले में पूरी तरह बेशर्म बना दिया है। उपन्यास में मुस्लिम पात्र गाय बचा रहा है और हिंदू पात्र गाय बेच रहा है और उसकी आड़ में कमाई कर रहा है। इस उपन्यास का उद्देश्य यही है कि समाज पाखंड से ऊपर उठे और गौ माता की ईमानदारी से सेनवा करे। टाउनहॉल में नक्सली उपन्यास व्यंग्य उपन्यास नहीं है। उसमें वर्णित कुछ दृश्यों में जरूर व्यंग्य है, पर पूरा उपन्यास नक्सल समस्या का समाधान चाहता है। सर्वोदय की भावना से प्रेरित इस उपन्यास के अंत में नक्सली राष्ट्र की मुख्य धारा में शामिल होने के लिये आत्म समर्पण कर देते हैं। उपन्यास स्टिंग ऑपरेशन(2015) राजनीतिक व्यंग्य है। जिसमें एक आवारा, पढ़ाई चोर लड़का बड़ा हो कर नेता बनता है। मंत्री भी बन जाता है। लेकिन अंतत: स्टिंग ऑपरेशन के बाद उसका राजनीति जीवन खत्म हो जाता है। इस उपन्यास में मैंने बताने की कोशिश की है कि राजनीति में अपराधी घुसते जा रहे हैं। एक अपराधी दूसरे को रिप्लेस करके आ जाता

| ISSN: 2582-7219 | www.ijmrset.com | Impact Factor: 5.928|

| Volume 4, Issue 12, December 2021 |

|DOI:10.15680/IJMRSET.2021.0412009 |

है। यही सिलसिला चल रहा है। मतलब यह कि मेरे हर उपन्यास का उद्देश्य समाज में घटित हो रहे सच का पर्दाफाश करता है। हर उपन्यास एक साहसिक चुनौती है। माफिया लिखने के बाद साहित्य जगत के अनेक चेहरे नाराज हुए क्योंकि उन पर प्रहार हुआ था। किताब का प्रचार करते हुए प्रकाशक ने जो कुछ लिखा, उसे अपनी प्रशंसा ही मानता हूँ कि "माफिया लिख कर लेखक ने अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मार ली है।मुझे अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मारना अच्छा लगता है। अन्याय के विरुद्ध जब मैं लिखता हूँ तो अपने लाभ के बारे में नहीं सोचता, न अपनी हानि की परवाह करता हूँ। जो सच है, वो लिखता हूँ। यही होना भी चाहिए। और दो टूक लिखता हूँ। मेरी क्रांति इतनी अमूर्त नहीं होती कि हो जाए और पता ही न चले। आलोचक बताए कि लेखक क्रांति का संदेश दे रहा है। दूसरे सवाल का उत्तर यह है कि मेरी हर रचना में यापन रहता है। विषय लीक से हट कर ही होते हैं। [10] और उसकी प्रासंगिकता भी लम्बे समय तक बनी रहेगी, ऐसी उम्मीद करता हूँ। जहाँ तक मेरी छवि का सवाल है, साहित्य में मुझे एकांत साधक की तरह ही देखा-समझा जाता है। मैं किसी दाँव-पेंच में नहीं रहता, जोड़-तोड़ में नहीं रहता। और हास्य-व्यंग्यकार की बजाय केवल व्यंग्यकार के रूप में अपनी छवि मजबूत बन रही है। मुझे केवल व्यंग्यकार के रूप में जाना जाए, हास्यकार के रूप में नहीं, यही मेरी इच्छा है। मुझे संतोष है कि सात उपन्यास लिख लेने के बावजूद मेरी व्यंग्यकार की छवि धूमिल नहीं हुई है। मैं खुद को उपन्यासकार की बजाय व्यंग्यकार कहलाना अधिक पसंद करता हूँ।

अखबारों में प्रकाशित होने वाले कालमों ने भी अनेक व्यंग्कार पैदा किये हैं। जो कभी दिखते हैं और कभी गायब हो जाते हैं। कुछ को मैंने ट्रैक बदलते भी देखा है पर कुछ निरंतर लिख रहे हैं। जहाँ तक प्रभावित होने की बात है मैं अपने समकालीनों में अनेक व्यंग्यकारों से प्रभावित हूँ। जो स्वर्गीय हो चुके हैं, उनके नाम नहीं लूँगा, मगर जो जीवित हैं, उनमें से कुछ के नाम ले सकता हूँ। कुछ के छूट भी सकते हैं। गोपाल चतुर्वेदी, ज्ञान चतुर्वेदी, हरि जोशी, सूर्यबाला, विनोदशंकर शुक्ल, प्रेम जनमेजय, बालेंदुशेखर तिवारी, हरीश नवल, सुभाषचंदर, अश्विनी दुबे, सुशील सिद्दार्थ, स्नेहलता पाठक, श्रवणकुमार उर्मलिया, अनुराग वाजपेयी, अजय अनुरागी, अरविंद तिवारी, जवाहर चौधरी, फारुख आफरीदी, अख्तर अली, त्रिभुवन पांडेय, प्रभाकर चौबे, विनोद साव, आरके पालीवाल आदि मुझे याद आ रहे हैं। इनके लेखन से मुझे प्रेरणा मिलती रहती है। नये लेखकों में भी कुछ लोग उभर रहे हैं। इनमें नीरज बधवार, अंशुमान खरे, संतोष त्रिवेदी, अतुल चतुर्वेदी, शरद उपाध्याय, अर्चना चतुर्वेदी, इंद्रजीत कौर, अनूपमणि त्रिपाठी, अलंकार, पंकज प्रसून, मनोज लिमये, कमलेश पांडेय, लालित्य ललित, वीणा सिंह, अंशु प्रधान, अभिषेक उपाध्याय, सतीश उपाध्याय, राहुल देव, वीरेंद्र सरल आदि हैं। कुछ नाम और होंगे जो फिलहाल याद नहीं आ रहे हैं। पुराने व्यंग्यकारों के साथ अपनी तुलना करता हूँ तो इतना ही कह सकता हूँ कि मैं अपने स्तर पर मौलिक हूँ। ये सब भी हैं। सबकी अपनी शैली है। जहाँ तक गुणवत्ता का सवाल है, मैंने हमेशा कोशिश की है कि अपनी शैली को निरंतर परिमार्जित करता रहूँ और लगातार बेहतर होने पर ध्यान दूँ। यह कहना उचित नहीं कि मैं सबसे आगे हूँ, पर इतना विश्वास है कि मैं परसाई और जोशी की परम्परा को ठीक ढंग से गति देने की विनम्र कोशिश कर रहा हूँ। [8]

परिणाम

गिरीश पंकज के अनुसार:-

बचपन की नींव पर ही हमारे जीवन का भवन खड़ा होता है। बचपन अगर अच्छा न हो, उसमें खुशियों के रंग न हो तो जवानी अभिशप्त भी हो सकती है। बचपन अगर अभावों में बीतेगा तो जीवन में मिलने वाली उपलब्धियां हम अपने तक सीमित रखेंगे। अगर जीवन खुशहाल रहा तो बड़े होकर अपने सुख भी बाँटने में संकोच नहीं करेंगे। बचपन को हम जितना बेहतर बना सकेंगे, किसी भी राष्ट्र का भविष्य उज्ज्वल होगा। इसलिए बच्चों के लिए अच्छा साहित्य रचा जाना चाहिए, ताकि उससे जुड़ कर वो एक अच्छा नागरिक बन सके। बचपन जवानी का श्रृंगार है। यह जितना सुंदर रहेगा, जीवन उतना अधिक सुवासित होगा, इसीलिये माता-पिता अपना पेट काट कर बच्चों का लालन-पालन करते हैं। गरीब-से-गरीब अभिभवक भी अपने सुनहरे भविष्य की कोशिश करता है। मुझे लेखक बनने में मेरा बचपन बड़ा सहायक हुआ। बगैर इसके रचना की दुनिया में मेरी उपस्थिति शायद होती ही नहीं। स्कूल में 'वन्यजाó नामक शालेय पत्रिका का प्रकाशन होना था। मास्टर जी ने प्राचार्य महोदय सुनाया और कहा सभी बच्चों को कुछ- लिख कर देना है. सरे बच्चे इधर-उधर की रचनाएँ एकत्र करके जमा करने लगे. लेकिन मुझे कुछ सूझ नहीं रहा था की करूँ क्या. स्मारिका में सबका नाम छपेगा, मेरा नहीं तो पिताजी की डाँट पड़ेगी। लेकिन कोई विचार तो मन में उमड़े। मित्र तो चोरी की रचनाएँ दे रहे यह सम्भव न हो रहा था. मन में निराशा थी. पर अचानक एक दिन सरस्वती माँ ने आकर दुलराया और एक नन्हा-सा गीत बन गया- "नींद से जागो प्यारे बच्चों, सबेरा सुहना मौसम लाया। खेल-कूद के दिन बीते अब, पढने का है मौसम आया। इस गीत में कुछ और पंक्तियाँ भी है, जिन्हे भूल रहा हूँ. मेरी कविता पंद्रह साल के बच्चे हिसाब से कुछ बेहतर लगी तो गुरूजी ने पूछा-"तुमने ही लिखी हैं न?[9] मैंने आत्मविश्वास के साथ कहा -"जी सर, मैंने ही लिखी है, अभी सुबह-सुबह। गुरूजी खुश हुए। मुझे शाबाशी दी और कहा- "वैरी गुड, इसी तरह लिखते रहो। शालेय पत्रिका के लिए लिखी उस कविता ने मुझे लेखन की ओर प्रवृत्त किया। फिर दिनकर जी की कविताएँ पढ़ी। एक दिन पिताजी की एक प्रकाशित कविता पर नजऱ पडी, जो खादी ग्रामोदयोग आयोग की किसी पत्रिका में प्रकाशित हुई थी। कविता कुछ इस तरह थी- "तुमको त्रेता का राम कहूँ या द्वापर का घनश्याम कहूँ। तुम स्वयं एक अवतारी थे फिर तुम को क्यों अवतार

| ISSN: 2582-7219 | www.ijmrset.com | Impact Factor: 5.928|

| Volume 4, Issue 12, December 2021 |

|DOI:10.15680/IJMRSET.2021.0412009 |

कहूँ? गांधी जी की स्तुति में वह एक लम्बा गीत था। इस गीत को पढ़ कर पिता के प्रति और सम्मान बढ़ा कि मेरे घर पर ही इतने अच्छे कवि हैं। मैंने उसके बाद कुछ-न-कुछ लिखने के कोशिश की। उस वक्त तो गद्य नहीं, पद्य ही सूझता रहा। कभी-कभी लिखता और पिताजी को दिखाता रहा। पिता देखते और मुस्करा कर पीठ थपथपाते। कहते कुछ भी नहीं। वे क्यों कुछ नहीं कहते थे, उसका अर्थ अब समझ में आता है। कविताएँ तो कमजोर ही थीं, पर पिताजी ने कभी नहीं कहा कि बेकार हैं। वे समझते थे कि हतोत्साहित करने से बच्चा टूट जाएगा। घर पर पिताजी थे और बाहर कौशल अरोड़ा था. उसके मन में भी लिखने की ललक थी। उसके साथ मिल कर मैंने कुछ नाटक भी लिखे जिन्हें हम लोग स्कूल के वार्षिकोत्सव में या मोहल्ले के गणेशोत्सव में मंचित करते थे. अपने बचपन और मित्रों के नटखट रूपों को मैंने काल्पनिक पात्रों के माध्यम से अपने व्यंग्य उपन्यास 'स्टिंग ऑपरेशन में सविस्तार वर्णित किया है।

निष्कर्ष

गिरीश पंकज के अनुसार:-

बचपन महत्वपूर्ण ही होता है। हम जीवन की किस दिशा की ओर मुडेंगे, यह अक्सर बचपन ही तय कर देता है। यह और बात है कि उस वक्त खुद हमें पता नहीं होता, न माता-पिता को , मगर हमारी निर्माण-प्रक्रिया बचपन की गतिविधियाँ तय करती चलती हैं। हमने देखा है कि अनेक लोगों का जीवन बड़ा संघर्षपूर्ण रहा। वे उन संघर्षो के बीच भी निखरे। कुछ टूट कर बिखर भी गए , पर कुछ ऐसे निखरे कि राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री तक बने। अनेक महापुरुषों का जीवन हमारे सामने हैं। बचपन के संघर्षों से ही वे निखरते चले गए। बचपन पर ध्यान देने की जरूरत है। यह घरवालों का दायित्व है तो सरकारों का भी। जो निर्धन हैं उन्हें भरपूर मदद मिले और जो सम्पन्न हैं, वे सावधानी के साथ बच्चों को विकास करें। मेरे जीवन का वर्तमान स्वरूप जिसे आपने लालित्य का नाम दे दिया है, बचपन की ही प्रतिसाद है। अगर मेरे बालमन में लिखने-पढने की ललक न होती तो मैं वो नहीं होता, जो शायद आज हूँ। किसी सरकारी दफ्तर में बैठा कलम घिस रहा होता और अब तक सेवा निवृत्त हो कर शायद मर-खप भी गया होता। आज अगर मैं सृजन-पथ का पथिक हूँ तो उसके पीछे बचपन के वे हैं जिन्होंने मुझे रचनात्मक बने रहने प्रेरित किया। मेरे साथ मेरे कुछ और मित्र थे, जो उस वक्त मुझसे बेहतर लिखते थे। मैं सोचा करता था, मुझे भी ऐसा लिखना चाहिए। यहाँ गोपाल बुनकर को याद करूँगा। उसकी कविताएं उस बक्त किसी बड़े कवि से कम नहीं थी। पंक्ति देखे -''गीत की ये पंक्तियाँ उस जहाँ के लिए हैं, लोग रहते हैं जहाँ पर मुर्दनी छाई हुई है। आज मेरा मेरा वो मित्र है। पर लिखता ही नहीं। जीवन के संघर्षों ने शायद उसे दूसरे पथ का राही बना दिया और वह एक सरकारी शिक्षक बन कर ही रह गया। संघर्ष -अभाव मेरे जीवन में भी था, पर मैंने उसमे भी जीवन का लालित्य बचाए रखने की कोशिश की। [10]

बचपन से जो रस मिला, उससे हुआ विकास।

मेरे मन में चिरयुवा है वह मेरा मधुमास।

जीवन में रंग भरने का काम बचपन आज भी करता है। बचपन की सुंदर बुनियाद पर जवानी का भवन खड़ा होता है। मुझे अच्छा बचपन मिला, उस कारण मैं बड़ा हो कर कुछ कर सका। वह रस जो बचपन में मिला, न मिलता तो शायद ये पंकज इतना नहीं खिलता। [10]

प्रतिक्रिया दें संदर्भ

1. **https://www.google.com/search?qrceid=chrome&ie=UTF-8**
2. http://gadyakosh.org/
3. https://www.exoticindiaart.com/book-author/girish%20pankaj/
4. https://www.pinterest.com/pin/566749934351304832/
5. https://rubarunews.com/
6. https://www.wikiwand.com/hi/
7. https://www.hindlish.in/sentence-in-hindi
8. https://sablog.in/author/girishpankaj1/
9. https://currentnews.org.in/from-girish-pankajs-pen-it-is-difficult-to-forget-prof-jayanarayan-pandey-special-death-anniversary/
10. https://www.raigarhtopnews.com/roshan-lal-agrawal-ke-nidhan-par-girish-pankaj-ne-jataya-shok/

INNO SPACE
SJIF Scientific Journal Impact Factor
Impact Factor: 5.928

INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER INDIA

निस्केयर NISCAIR

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

IN SCIENCE, ENGINEERING AND TECHNOLOGY

9710 583 466 9710 583 466 ijmrset@gmail.com

www.ijmrset.com